International Journal of Applied and Universal Research **E- ISSN No: 2395-0269**
Volume VI, Issue IV, August 2019 Available online at: www.ijaur.com

"पं. प्रतापनारायण मिश्र कि नारी दृष्टि"

सोना पाठक
अतिथि विद्वान
हिंदी भाषा एवं विज्ञान विभाग
रानी दुर्गावती वि0 वि0 जबलपुर (म0प्र0)

सारांश– नारी सृष्टि का आधार है वह नर की सहधर्मिणी है। अपने सहज स्वभाविक गुणो में ही उसका नारीत्व है। उसके दिव्य गुणों के कारण की हमारे ग्रन्थों में 'यंत्र–नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता' कहकर उसका सम्मान किया गया है। इतिहास गवाह है कि जिन समाजों में महिलाओं को बराबरी अथवा उच्चतर दर्जा दिया गया है वे विकास व प्रगति की दौड में अपने समकालीनों से मीलो आगे रहे है। नेपोलियन–बोनापार्ट जैसे सेनानायक ने महिलाओं को शिशु व समाज दोनों की आनुशंगिक पाठशाला स्वीकारते हुए एक महान राष्ट्र के निर्माण में उनकी उपादेयता यूं ही अकारण स्वीकार नही की थी, जो शक्ति नारी के दो शव्दों में है वो हुजूम के नारों में नही। अठारवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध व उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में स्त्रियों की स्थिति बड़ी दयनीय थी। नारी जाति समाज में कई कुप्रथाओं की शिकार थी। इन्हीं प्रचलित कुप्रथाओं के द्वारा ये घर की चार दीवारी के अन्दर रहती थीं। जिससे उनका बौद्धिक व मानसिक विकास नहीं होता था। समाज में बाल–विवाह वृद्ध–विवाह व बहु–विवाह इत्यादि कुप्रथाएँ प्रचलित थीं। 19 वीं शती में सुधार की जो श्रृंखला चली उसमें स्त्रियों की दशा सुधारना लेखकों का मुख्य विषय रहा है। उस समय के सभी समाज सुधारकों, चिन्तकों, साहित्यकारों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति और उनकी हैसियत सुधारने का अभियान चला रखा था। पं. प्रतापनारायण मिश्र भी इससे अलग नहीं रह सके। उन्होंने स्त्री दशा सुधार आन्दोलन में सक्रिय भागी दारी की इसलिए वे देशोन्नति व समाजोन्नति के अवसर पर स्त्रियों को भुला नहीं पाते, क्योंकि उनकी दृढ़ मान्यता थी कि स्त्रियों की दशा सुधारे बिना देश की उन्नति सम्भव ही नहीं है, वे स्त्रियों की दुर्दशा से पूर्णतः परिचित थे। समाज में फैली इन बुराईयों का उन्होंने घोर विरोध किया, इनका विरोध इस लिए किया क्योंकि वे सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते थे। ये रूढ़ियों को समाज से बदलना चाहते थें। समाज की छवि तभी सुधर सकती है। जब पहले इन बुराईयों कों जड़ से खत्म किया जाएँ। इन सबका उन्मूलन करके ही राष्ट्र की उन्नति हो सकती है।

मुख्य शब्दः– पं. प्रतापनारायण मिश्र और नारी दृष्टि।

प्रस्तावनाः–

समाज में फैली इन बुराईयों का उन्होंने घोर विरोध किया, इनका विरोध इस लिए किया क्योंकि वे सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते थे। ये रूढ़ियों को समाज से बदलना चाहते थें। समाज की छवि तभी सुधर सकती है। जब पहले इन बुराईयों कों जड़ से खत्म किया जाएँ। इन सबका उन्मूलन करके ही राष्ट्र की उन्नति हो सकती है।

अठारवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध व उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में स्त्रियों की स्थिति बड़ी दयनीय थी। नारी जाति समाज में कई कुप्रथाओं की शिकार थी। इन्हीं प्रचलित कुप्रथाओं के द्वारा ये घर की चार दीवारी के अन्दर रहती थीं। जिससे उनका बौद्धिक व मानसिक विकास नहीं होता था। अपने पतियों के दुर्व्यवहार से भी उन्हें अनेक कष्ट सहने पड़ते थे। वे दासी की भाँति अपना जीवन यापन करती थीं। समाज में बाल–विवाह वृद्ध–विवाह व बहु–विवाह इत्यादि कुप्रथाएँ प्रचलित थीं। 19 वीं शती में सुधार की जो श्रृंखला चली उसमें स्त्रियों की दशा सुधारना लेखकों का मुख्य विषय रहा है। लेखकों के साथ–साथ बहुत से समाज सुधारकों ने भी नारी की गिरती हुई दशा पर चिन्ताव्यक्त की है। इनकी दशा सुधारने के लिए तरह–तरह के लेख प्रकाशित किए। नारी के महत्व को प्रथम बार ही भारतीय चिन्तन और साहित्य में इतनी प्रमुखता मिली। उस समय के सभी समाज सुधारकों, चिन्तकों,साहित्यकारों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति और उनकी हैसियत सुधारने का अभियान चला रखा था।

पं. प्रतापनारायण मिश्र भी इससे अलग नहीं रह सके। उन्होंने स्त्री दशा सुधार आन्दोलन में सक्रिय भागी दारी की इसलिए वे देशोन्नति व समाजोन्नति के अवसर पर स्त्रियों को भुला नहीं पाते, क्योंकि उनकी दृढ़ मान्यता थी कि स्त्रियों की दशा सुधारे बिना देश की उन्नति सम्भव ही नहीं है, वे स्त्रियों की दुर्दशा से पूर्णतः परिचित थे। इस दशा के लिए देश का दुर्भाग्य मानते हैं–**" देश के दुर्भाग्य से स्त्रियों का उचित आदर नहीं होता, वे केवल दासी की भाँति रक्खी जाती हैं। उनसे प्रत्येक विषय में सम्पत्ति लेने और उन्हें शिक्षा देने की चाल उठ गई हैं। "**[1]

मिश्र जी स्त्री को पराधीन दशा और उसे दासी मानने की भावना का प्रबल विरोध व्यक्त करते हैं। वे स्त्री को भी पुरूष के समान सम्मान और अधिकार दिलाना चाहते हैं। इसलिए वे स्त्री को अर्द्धागिनी के रूप में देखते हैं अर्थात् परिवार में स्त्री और पुरूष की बराबर भागीदारी से ही घर परिवार का सुखमय जीवन सम्भव है, पुरूष के बराबर नारी का स्थान बताते हुए मिश्र जी कहते हैं–**"जो प्रतिष्ठा, जो अधिकार, जो गौरव पुरूषों का है वही स्त्रियों का भी है।"**[2] वे स्त्रियों की महत्ता पुरूषों से अधिक मानते हैं क्योंकि **"संसार उत्पत्ति, गृहस्थी का सुख, रसिक का प्रमोद इन्हीं के हाथ में है।"**[3] ये स्त्री को दान की वस्तु न मानकर कहतें हैं कि दान तो किसी वस्तु या पशु का ही हो सकता है।

''स्त्री वस्तु नहीं है, न पशु है, जिसे किसी को दिया जा सके।''[4]स्त्री पुरूष को **'' संसार रूपी रथ के दोनों पहिए मानते हैं।''**[5] जो स्त्रियों को तुच्छ समझते हैं उन्हें ये धिकारते हैं।

इस प्रकार वे स्त्रियों कीमहत्ता को स्वीकार करते हैं, उनकी शिक्षा पर भी जोर देते हैं,विधवा–विवाह का समर्थन ब बाल विवाह का विरोध करते हैं, क्योंकि इनके बिना स्त्रियों की दशा में सुधार सम्भव नहीं। नारी की गिरी हुई दशा को वे समाज के लिए घातक मानते हैं। प्रतापनारायण मिश्र का मानना था कि जब तक नारी की दशा में सुधार नहीं होगा, जब तक समाज में जाग्रति नहीं आ सकती । इस समाज में नारी के प्रति दो धारणाएँ हैं–

यत्र–नार्यस्तु पूज्यनते, रमन्ते तत्र देवता, की भावना है तो दूसरी तरफ नारी को **'नरक का द्वार,' 'ताड़न की अधिकारी, माया, 'पुरूष के विकास में बाधक' आदि माना है। मिश्र जी मानते ''है कि नारी के प्रति जो लोग इस प्रकार का दृष्टिकोण रखते हैं, उनका मजाक बनाते हैं, तथा ये स्त्री को बहुत आदर देते हैं, और समाज में पूज्य मानते हैं, '' सच तो यह है कि जिस स्त्री ने मन वचन, कर्म से सत्य से सरलता के साथ पति प्रेम का निर्वाह किया वह महत्वपूजनीय है।''**[6] **ये केवल स्त्रियों के लिए ही पतिव्रत धर्म की बात नहीं करते हैं। वे पुरूषों का भी पत्नीव्रत होना आवश्यक मानते हैं**– '' इधर हमारे ग्रहस्थ भाईयों को समझना चाहिए कि दोनों हाथ ताली बजती है। उन्हें पतिव्रता बनाने के लिए इन्हें भी स्त्रीव्रत धारण करना होगा।''[7]

उस समय लड़कियों को पढ़ाना भी हेय समझा जाता था। लड़कियों की शिक्षा सीमित थी, यदि कोई लड़की पढ़ भी गई तो उसकी शादी होने में बहुत परेशानी होती थी। पढ़ी–लिखी लड़की से शादी करने में लोग एतराज करते थे। बचपन में ही लड़कें–लड़कियों की शादी कर दी जाती थी, इससे उनका आगामी विकास भी रूक जाता था।

स्त्रियों की दशा को सुधारने के लिए उन्होंने अनेक प्रकार के उपाय किए। उन्होंने बताया कि यदि स्त्रियों की द''ाा में सुधार करना है तो स्त्रियों को भी भिक्षा देनी चाहिए शिक्षा के अभाव के कारण ही स्त्रियों के यह दुर्दशा हुई। **''स्त्री शिक्षा की चाल सी उठ गई है ।''**[8] तथा **'' पुरूषों के लिए सब कहीं पाठशाला है, उनके लिए यदि है भी तो न होने के बराबर हैं।''**[9] ये स्त्रियों के लिए अधिक सुधार साधनों की आव''यकता पर बल देते हैं। क्योंकि **''मर्दो की तो सभाएँ भी हैं, अखबार भी है, पुस्तक भी हैं। पर स्त्रियों के लिए उपदेश की कोई चाल ही नहीं है।''**[10]

उन्होंने सदैव ऐसी बातों के लिए लोागों को प्रोत्साहित किया जिनमें उनका सुधार सम्भव हो। उन्होंने अन्य लेखकों से भी आग्रह किया कि स्त्रियों के लिए भी शिक्षापयोगी पुस्तकें लिखें तथा उनसे कहते हैं कि **'' नवीन ग्रन्थकारों को चाहिए कि जहाँ और भी बातें लिखते हैं कभी–कभी इधर भी झाकते रहें। व्याख्यानदाता लोग कभी – कभी स्त्रियों को भी परदे के साथ स्त्री धर्म की शिक्षा दिया करे।''**[11]**बच्चों में अच्छे गुणों का विकास करने के लिए स्त्री की भागीदारी सबसे मुख्य होती है। उन्हें अच्छा नागरिक बनाने के लिए माँ का शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। अगर** ''माँ स्वयं अशिक्षित है, वो लडकों को क्या शिक्षा देगी।''[12] स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए मिश्र ने 'ब्राह्मण' में अपने लेख छापे। यही कहा जा सकता है कि उन्होंने हर तरफ से स्त्रियों के सुधार के लिए प्रयास किए।
पं. प्रतापनारायण मिश्र ने स्त्री शिक्षा की तरफ भी बहुत ध्यान दिया। उनका मानना था कि जब तक स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होगी तब तक हमारे समाज में जागरूकता नहीं आ सकती है। लोग इसी प्रकार से नारी जाति पर अत्याचार करते रहेंगे इन सब बुराइयों को दूर करने के लिए नारी शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। उन्होंने नारी शिक्षा सम्बन्धी कई पुस्तकें भी निकाली और शिक्षा के अभाव में ही इनके साथ दुर्व्यवहार हो रहा है। उन्होंने स्त्री के उत्थान के लिए सर्वाधिक बल स्त्री शिक्षा पर दिया है। **"स्त्री शिक्षा की तो चाल सी उठ गई है।**[13] क्योंकि उस समय लोग अन्धवि''वासी थे वे स्त्री शिक्षा को पाप मानते थे। उनका मानना था कि अगर समाज में फेरबदल जागरूकता लानी है तो स्त्रियों के लिए पाठशालाएँ खुलवाई जाए। उस समय में नारी शिक्षा के लिए पाठशालाएँ थी ही नहीं अगर थी वे ना के बराबर थी। शिक्षा के अभाव के कारण नारियों को बौद्धिक और मानसिक विकास भी नहीं हो पाता था।

बाल विवाह–

उन्नीसवीं शताब्दी में बाल–विवाह की प्रथा ने भयंकर रूप धारण कर लिया था। यह प्रथा अत्यन्त पुरानी है। बचपन में ही लड़के–लड़कियों की शादी कर दी जाती थी। इस कुप्रथा के कारण उनका शारीरिक पतन हो जाता था, साथ ही उनका आगामी विकास भी रूक जाता था। उस समय गर्भस्थ शिशु का विवाह भी निश्चित कर दिया जाता था। इस तरह से लड़कियाँ अधिक प्रभावित होती थी। उस समय लड़की के लिए विवाह कोई सुखद अनुभव न था, क्योंकि उसे बाल–विवाह की अनेक यातनाएँ सहनी पड़ती थी। प्रतापनारायण मिश्र ने इस सामाजिक कुरीति पर अनेक लेख प्रकाशित किए तथा जनता में चेतना उत्पन्न की। बाल–विवाह के विरोध में उन्होंने टिप्पणी व लेख लिखे। उनके लेखों में " बाल्य विवाह" प्रमुख है। उन्होंने अपने लेख में बाल विवाह के दोष बताएँ हैं। इसके भयंकर परिणमों से ये जनता को अवगत कराने के लिए समय–समय पर लेख लिखते रहें **" देश दिन–दिन दीन दशा को पहुँचता जाता है। क्या सूझता नहीं कि बाप दादे कैसे बलवान होते थे उनमें साठा सो पाठा की कहावत प्रसिद्ध थी, और तुम बीसा सो सोखा हो जाते हो। इसमें क्या करे यह युग का प्रभाव है। अभी तो वह दिन आने वाले हैं, जब वित्ता–वित्ता भर के आदमी होने लगेंगे। अरे भाई! यह**

बाल विवाह का प्रभाव, वीर्य रक्षा न करने का प्रभाव है।"[14] वे बाल विवाह के यहा तक विरोधी थे कि बाल विवाह को देश की उन्नति में बाधक मानते थे।

प्रतापनारायण मिश्र बाल विवाह के कट्टर विरोधी थे–**"सैंकड़ों पस्तिष्कवान देशभक्त लोग बरसों से चिल्लाते थक गये कि अपना भला चाहो तो बाल विवाह की रीति उठाओं दूध के बच्चों का बालवीर्य मिट्टी में न मिलाओं पर किसी के कान में जूँ न रेंगी।"**[15]

मिश्र जी ने बाल्य विवाह पर अपना लेख लिखना परम कर्त्तव्य माना है–**" इधर देश भाईयों को भी पूर्ण उद्योग के साथ चितावें कि अब लड़के–लड़कियों के ब्याह को गुड्डियाँ–गुड्डों का ब्याह समझना ठीक नहीं है ये अन्य सामाजिक कुप्रथाओं की तरह इस कुप्रथा का भी अन्त करना चाहते हैं। इसको दूर करने में सरकार की सहायता लेने के पक्ष में नहीं हैं। उनका माानना है कि हम स्वयं ही समाज को सुधारने में सक्षम है। इस प्रथा को समाप्त करने के लिए वे देर से विवाह करने का सुझाव देते हैं–** " परमे"वर करे कि देश में यही चाल चल जाए कि ब्याह 25–26 वर्ष में हुआ करें।"[16]

इससे स्पष्ट होता है कि ये बाल विवाह के पूर्णतः विरोधी थे। लेकिन प्रारंभ में तो लोगों को उनके बाल–विवाह का विरोध विचित्र सा लगा।

दहेज–प्रथा–

दहेज–प्रथा का भी उस समय बड़ा जोर था। निर्धन लोग अपनी लड़कियों का विवाह ही नहीं कर पाते थें। राजपूताना तथा देश के कुछ अन्य भागों में तो विवाह की ही परे"ाानी के कारण कन्याओं का वध तक कर दिया जाता था। कन्या के जन्म लेते ही माताएँ उसे अफीम देकर मार डालती थी। दहेज के लोभ के कारण लोग अनेक विवाह करते और अपनी पत्नियों को मार डालते थे। सरकार ने समाज सुधारकों व लेखकों की मदद से इन कुप्रथाओं पर रोक लगा दी।

सती–प्रथा–

19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बंगाल, राजपूताना और दक्षिण भारत में सती प्रथा विशेष रूप से प्रचलित थी। सती –प्रथा भी हमारे समाज में भयंकर कुप्रथा प्रचलित थी। उच्च कुल की स्त्रियाँ अपने पति मृत्यु के बाद उसकी चिता के साथ ही सती हो जाती थी। अगर कोई स्त्री इसका विरोध करती तो उसके नाते–रिश्तेदार उसे जबरदस्ती चिता में धकेल देते थे। यदि कोई स्त्री होने से बच भी गई तो उसे अधिक कष्टमय जीवन यापन करना पड़ता था। अनेक समाज सुधारकों ने इस कुप्रथा को समाप्त करने का प्रयास किया। राजा राममोहनराय के प्रयत्नों से 1829 ई.में लार्ड विलियम बैंटिक ने अवैध घोषित कर दिया। सती प्रथा पर तो रोक लग गई लेकिन फिर भी विधवा – विवाह की समस्या सामने आ खड़ी हुई।

विधवा–विवाह–

जब सती प्रथा जैसी कुप्रथा पर रोक लगाई गई तो समाज के सामने एक ओर विकट समस्या खड़ी हो गई। वह समस्या विधवाओं की थी। यह समस्या वृद्ध विवाह व बाल विवाह के कारण तेजी से बढ़ती जा रही थी। सती–प्रथा पर रोक लगने के कारण अब यह समस्या विकट रूप धारण कर ली थी। पुरातन समय में विधवा विवाह नहीं होता था। इसका ना होना समाज का एक कलंक रहा है। धीरे–धीरे समाज सुधरकों का ध्यान विधवा विवाह पर गया।

पति की मृत्यु के बाद पत्नी को आजीवन घर में बैठना होता था, श्रृगार आदि तो अलग बात थी, उसे अच्छे वस्त्र तक पहनने की अनुमति समाजन हीं देता था उसे सदैव श्वेत वस्त्र धारण करने पड़ते थे। कहीं–कहीं तो विधवाओं को सिर मुंड़वाना भी अनिवार्य होता था। उनका मुखदर्शन अशुभ माना जाता था, उनके हाथ का छुआ भोजन भी कोई नहीं खाता था। वे जीवित लाश के रूप में यातनाएँ झेलती थीं। ऐसी स्थिति में कुछ तो आत्म हत्याएँ कर लेती थी। ई"वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयत्नों से 1856 ई. में विधवा–विवाह कानून पास हुआ। लेकिन समाज के कट्टरपंथियों ने इसका विरोध किया पं. प्रतापनारायण मिश्र ने इस कुप्रथा का अन्त करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया। ये विधवाओं की समस्या को बाल विवाह को ही दुष्परिणाम मानते थे, **" यदि बाल विवाह की प्रथा उठ जाए तो विधवा विवाह की आवश्यकता ही न रहे।"**[17] वे चाहते थे कि जो लोग विधवा विवाह में बाधक हैं, उन्हें जेल की सीखंजों में होना चाहिए **" ऐसे लोगों को सजा ठहरा दी जाए जो कामवर्ती बाल विधवाओं के पुनर्विवाह में बाधक होते हैं। "**[18] देशोन्नति के प्रसंग में वे कहते हैं, कि अगर उन्नति चाहते हो तो इन सामाजिक बुराईयों को जड़ से उखाड़ना होगा। वे विधवा विवाह के प्रचार और प्रसार में कोई अवसर खोना नहीं चाहते। उन्होंने 'ब्राह्मण' में 'विधवा विवाह सिद्धान्त' नामक पुस्तक का परिचय कराकर उस पुस्तक की उपयोगिता के बारे में बताया " पुस्तक बहुत उपयोगी है, क्योंकि आजकल देश के अभाग्य से बाल्य–विवाह फैला हुआ है, जिसके कारण बाल विधवाओं की संख्या बढती जाती है और इन विचारियों का पुनर्विवाह न होने भ्रुण हत्या और व्यभिचार की भरमार हैं। अतः ऐसे ग्रन्थों की आव"यकता है जिनमें मुक्ति एवं प्रमाण से विधवा विवाह की भलाई बुराई जातई गई हो।"[19]

बहु–विवाह व अनमेल –विवाह–

प्राचीन काल में ये दोंनों प्रथाएँ भी पूर्ण रूप से विकसित थी। पं. प्रतापनारायण मिश्र इन कुरीतियों के विरूद्ध थे। उनके साथ – साथ उस युग के भारतेन्दु हरि"चन्द्र भी इस प्रथा के पक्ष में नहीं थें। मिश्र ने बाल विवाह का तो विरोध किया ही साथ ही भारतेन्दु कालीन समय में कुलीन परिवारों में प्रचलित बहु–विवाह व अनमेल – विवाह की भी निन्दा की। भारतेन्दु ने भी अनमेल विवाह की समस्या पर कटाक्ष करते हुए भारतेन्दु ने "विशस्य विषमौषधम्" में अपनी बात को व्यक्त करते हुए कहा है – " धन्य भारत भूमि तुझे ऐसे ही पुत्र

प्रसव करने थे। हाय! मुहम्मदशाह और वाजिद अली शाह तो मुसलमान हो के छुटे पर मल्हारराव का कलंक हिन्दुओं से कैसे छुटेगा। विधवा–विवाह सब कराना चाहते हैं पर उसमें से सौभाग्यवती विवाह निकाला। ''[20]

''करि कुलीन के बहुत ब्याह बन धीरज मारयो।''[21] भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है? नामक व्याख्यान में भारतेन्दु ने कहा कि'' कुलीन प्रथा बहु विवाह को दूर कीजिए। ''[22] इस प्रकार की बुराईयों में लड़कियाँ ही ज्यादा प्रभावित होती थी। बंगाल में तो इन समस्याओं ने विकट रूप धारण कर रखा था। बंगाल की ही बहु विवाह व अनमेल विवाह का एक उदाहरण इस प्रकार है '' बंगाल में एक 80 वर्षीय वृद्ध की करीब दो सौ पत्नियां थी, उसकी सबसे छोटी पत्नी की उम्र आठ साल थी। ''[23] इस प्रकार इस आठ साल की लड़की के लिए विवाह कोई सुखद अनुभव न था। इस प्रकार पं. प्रतापनारायण मिश्र ने तो इस अनमेल ''विवाह पर अपने विचार इस प्रकार दिये जो लोग ये कहते हैं कि वर–कन्या की इच्छा से होना चाहिए, उन्हें यह भी मानना उचित है कि पच्चीस वर्ष का पुरूष और सोलह वर्ष की स्त्री, विद्या तथा बुद्धि चाहे जितनी रखती हो पर सांसारिक अनुभव में पूर्ण दक्षता नहीं प्राप्त कर सकती। ''[24] उनका मानना है कि उनमें भी अनुभवशीलता की कमी ही रहती है। इस प्रकार मिश्र ने इस प्रकार के विवाह का समर्थन करते हैं, बल्कि उनकी भी हंसी उड़ाते हैं। ये प्रथाएँ जब तक समाप्त नहीं होगी तब तक इसी प्रकार लड़कियों का शोषण होता रहेगा। इसी कारण से विधवा – विवाह की समस्या भी उठ खड़ी होती है।

वेश्यावृति–

इस शताब्दी में वेश्यावृत्ति भी अपने चरम शिखर पर थी। इसे भी देश के लिए पं. प्रतापनारायण मिश्र ने घातक माना है। वे अपने समय में वेश्यावृत्ति में वृद्धि को 'समय का फेर' मानते हैं। क्योंकि पहले वेश्याओं के यहाँ लोग लाज के मारे न जाते थे। लेकिन आजकल '' वश्या के यहाँ जाना तुम अमीरी और जिन्दादिली समझते हो। धिक्कार है इस बुद्धि को।''[25] वे''याएँ तो धन की प्रेमी होती हैं, वे लोगों से पैसा ठगती रहती हैं, '' वश्याएँ सीधे–सादे कामियों का सर्वस्व हर लेती हैं, और अंगूठा दिखा देती है। ''[26] ऐसा होने पर वेश्याओं के यहाँ बड़े–बड़े 'धर्मात्मा' और' प्रतिष्ठित' लोग चक्कर लगाते हैं– '' वेश्याओं के यहाँ यदि दो चार मास आपकी बैठक रही हो तो देखा होगा कैसे–कैसे प्रतिष्ठित कैसे–कैसे सभ्य, कैसे–कैसे धर्मात्मा जी, वहाँ जाकर क्या–क्या लीला करते हैं।''[27]

निष्कर्ष–

समाज में फैली इन बुराईयों का उन्होंने घोर विरोध किया, इनका विरोध इस लिए किया क्योंकि वे सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते थे। ये रूढ़ियों को समाज से बदलना चाहते थें। समाज की छवि तभी सुधर सकती है। जब पहले इन बुराईयों कों जड़ से खत्म किया जाएँ। इन सबका उन्मूलन करके ही राष्ट्र की उन्नति हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. पं. प्रतापनारायण–ग्रथावली, पृष्ठ 445 संपादक–विजयशंकर मल्ल प्रकाशन, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
2. पृ.स. 393 वही ''
3. ब्राह्मण पत्र 8/10
4. पं. प्रतापनारायण–ग्रथावली, पृष्ठ,सं.352
5. पृष्ठ, सं. 353,वही
6. पृ.सं. 153 वही
7. पृ.सं. 302 वही
8. पृ.सं. 189 वही
9. पृ.सं.189 वही
10. पृ.सं.190 वही
11. पृ.सं.190 वही
12. पृ.सं.201 वही
13. पृ.सं.191 वही
14. पृ.सं.190 वही
15. पृ.सं. 269 वही
16. पृ.सं. 190 वही
17. पृ.सं.023 वही
18. पृ.सं.027 वही
19. पृ.सं.404 वही
20. पृ.सं.405 वही
21. पृ.सं.271 वही
22. पृ.सं.321 वही
23. पृ.सं. 136 वही
24. ब्राह्मण 5/10
25. ब्राह्मण 1/10/11 आदि
26. पं. प्रतापनारायण–ग्रंथावली पृ.सं 321 वही
27. ब्रजरन्त दास, भारतेन्दु –ग्रंथावली (पहला भाग) पृ.सं. 367।